इकाई 17 अहंकार त्याग

इकाई की रूपरेखा

17.0 उद्देश्य

17.1 प्रस्तावना

17.2 अहंकार त्याग (2/7, 47), (9/27, 8/7, 11/55) श्लोक, अनुवाद और व्याख्या

17.3 सारांश

17.4 शब्दावली

17.5 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

17.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

17.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- अहंकार के विषय में जान सकेंगे।
- अहंकार का त्याग जीवन में क्यों आवश्यक है यह जान सकेंगे।
- अहंकार के त्याग से मनुष्य दूसरों के प्रति किस प्रकार व्यवहार करता है यह जान पाएंगे।
- अहंकार को त्याग कर योगी किस प्रकार निस्वार्थ भाव से कर्म करता है यह जान सकेंगे।
- अहंकार से किये गये कर्म किस प्रकार निष्फल होते हैं यह जान पाएंगे।
- अहंकार त्याग से जीवन में क्या लाभ होते हैं यह भी जान पाएंगे।

17.1 प्रस्तावना

गीता में अनेक विषयों का उपदेश दिया गया है जिसमें कृष्ण द्वारा अर्जुन को 'अहंकार का त्याग' किस प्रकार एक व्यक्ति के द्वारा किया जाना चाहिए इस विषय में अनेक प्रकार से बताते हैं। अहंकार के परित्याग कर देने से उचित क्या है और अनुचित क्या है इसका विवेक बुद्धि में जाग्रत हो जाता है। सभी विषयों और कर्मों को अहंकार रहित होकर परमात्मा में किस प्रकार साधक सर्वसमर्पण करें। मनुष्य की प्रवृत्ति है कि वह कोई भी कार्य करे तो उसमें स्वयं ही 'अहं' भाव आजाता है, जिस भी कार्य को करता है 'मैंने किया है' इस प्रकार से 'मैं' की भावना से ओतप्रोत रहता है जिसके विपरीत परिणाम आने से दुखी हो जाता है। इसलिए मनुष्य जो भी कर्म करें, दान करें, तप करें, यजन करें उन सभी में यह सोचकर कि यह मेरे द्वारा नहीं अपितु भगवद् इच्छा से किया जा रहा है इस प्रकार से मैं 'अहं' अहंकार का त्याग करें, अहं का त्याग करने से उसके विपरीत परिणाम मिलने पर भी मनुष्य दुखी नहीं होता। इस प्रकार 'अहंकार त्याग' के विषय में अधोलिखित प्रस्तुत 'अहंकार त्याग ' नामक इकाई में विस्तृत वर्णन किया गया है।

17.2 अहंकार त्याग (2/7, 47), (9/27, 8/7, 11/55), श्लोक, अनुवाद और व्याख्या

कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः पृच्छामि त्वां धर्मसम्मूढचेताः।

यच्छ्रेयः स्यानिश्चितं ब्रूहि तन्मे शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम् ॥२/७॥

अनुवाद –कायरतारूपी दोष से ग्रस्त स्वभाव वाला तथा धर्म के विषय में मोहग्रस्त हृदय वाला मैं आपसे पूछता हूँ, जो साधन कल्याणकारी हो वह निश्चय पूर्वक मेरे लिए कहिए, मैं आपका शिष्य हूँ आपके शरण आये हुए मुझे उपदेश दीजिये।

व्याख्या –अर्जुन कहता है– अनात्मस्वरूप वाला अविद्या से उत्पन्न देह इन्द्रिय आदि ही मैं हूँ ऐसा मानने वाला अज्ञानी कृपण मैं, अविद्या से इस संसार में गिरे हुए मुझ पुरुष को, जिसका ज्ञानस्वरूप प्रकाशात्मक धर्म में चित्त प्रविष्ठ नहीं हुआ है, जो अपने कर्त्तव्य भूल गया है, जिसका सारा धैर्य नष्ट हो चुका है, ऐसी अवस्था वाला मैं आप परमेश्वर से पूछता हूँ कि 'जिसे श्रुति–स्मृति तथा महर्षियों द्वारा श्रेय का साधन एवं शोक का नाशक मार्ग कहा गया है वह मुझे कहिये, मैं आपका शिष्य हूँ आपके शरण में आया हुआ हूँ मुझे उपदेश दीजिये अर्थात समझाइये।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि ॥२/४७॥

अनुवाद –कर्म करने में ही निश्चित रूप से तुम्हारा अधिकार है, उसके (कर्म) फलों में कभी नहीं। (इसलिए तुम)कर्म के फलों का कारण मत हो, और कर्म न करने में भी तुम्हारी आसक्ति न हो।

व्याख्या –श्रुति– स्मृति द्वारा बताये गये काम्यवर्जित नित्य तथा नैमित्तिक कर्मों में ही तुम्हारा अधिकार है अर्थात तुम्हारा अधिकार कर्मफलों में (यज्ञ–दान तप आदि कर्मों का फल बताया जाता है, नित्यकर्मों से पाप नष्ट हो जाते हैं ऐसे कर्मफलों में) तुम्हारा अधिकार नहीं है, अर्थात कर्म के फलों में कभी अपेक्षा नहीं करनी चाहिए जिस प्रकार बीज से अंकुर उत्पन्न होगा वैसे ही कर्म के फलो की इच्छा होने पर पुनर्जन्म आदि दुःखभूमियाँ उत्पन्न होंगी इसलिए तू कर्मफल प्राप्ति का कारण मत बन। (यदि कर्म–फल की इच्छा न हो तो दुखरूप कर्म करने की क्या आवश्यकता है) कर्म न करने में भी तेरी आशक्ति और प्रीति न हो।

यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत्।
यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम्॥९/२७॥

अनुवाद –हे अर्जुन ! तुम जो कर्म करते हो, जो खाते हो, जो हवन करते हो, जो दान देते हो और जो भी तप करते हो, वह सब मुझको अर्पण करो।

व्याख्या –हे अर्जुन ! लोक में जो विहित है– जिन लौकिक कर्मों को तुम करते हो, जिस अनायास ही प्राप्त हुए अन्न को तुम खाते हो, जो चरु, पुरोडाश आदि होम योग्य वस्तुओं का श्रौत–स्मार्त विधियों से यज्ञ में अग्नि आदि देवताओं के लिए हवन करते हो, जो कुछ स्वर्ण, धन, धान्य, कन्या, गौ, घृत आदि उत्तमवस्तु ब्राह्मणआदि सत्पात्रों को देते हो और जो कुछ संध्या–वन्दन, वेदाध्ययन, व्रत–उपवास आदि तप करते हो – लौकिक और वैदिक जो भी कर्म करते हो उन सबको मेरे को अर्पित करो।

तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशयम्॥८/७॥

अनुवाद –इसलिये हे अर्जुन ! तुम सभी कालों में मुझको स्मरण करो और युद्ध भी करो। मुझको समर्पित किये हुए मन बुद्धि से युक्त होकर (तुम) मुझे निःसंदेह (अर्थात निश्चय रूप से) ही प्राप्त करोगे।

व्याख्या –हे अर्जुन ! तुम सब कालों में आहार, विहार, शयन, आसन आदि सब अवस्था में मन और बुद्धि से सर्वात्मक ब्रह्मस्वरूप मुझे स्मरण करो और (तुम क्षत्रिय हो) अतः शास्त्रज्ञानानुसार अपने जीवन का साधनरूप युद्ध भी करो। इस प्रकार मुझमें जिसकी मन–बुद्धि अर्पित की गयी है ऐसा मुझमें समर्पित किये हुए मन–बुद्धि वाला तू, मेरे जिस स्वरूपका तू चिन्तन करेगा उसी को प्राप्त हो जायेगा, इसमें कोई संशय नहीं है।

मत्कर्मकृन्मत्परमो मद्भक्तः सङ्गवर्जितः।
निर्वैरः सर्वभूतेषु यः स मामेति पाण्डव॥११/५५॥

अनुवाद –हे अर्जुन ! जो मेरे लिए ही कर्म करने में लगा हुआ है, जो मुझे ही परम लक्ष्य मानता है, मेरी भक्ति करता है और विषयभोगों की आसक्ति से रहित जो प्राणिमात्र में वैरभाव नहीं रखता (शत्रुभाव) से रहित है, वह पुरुष मुझको ही प्राप्त करता है।

व्याख्या –जो मुझ परमेश्वर के लिए ही लौकिक और वैदिक कर्म को करता है, अपने स्वार्थ के लिए कुछ भी नहीं करता है जिस फल की इच्छा से मनुष्य कर्म करता है उसी फल को वह प्राप्त करता है अन्य दूसरे फल को नहीं, वैसे ही यह मेरे लिए कर्म करता है अतः मुझको ही प्राप्त होता है। जिसकी इन्द्रियों की वृत्ति मेरे स्वरूप को ग्रहण करने में प्रयत्नशील है, तथा विश्वस्वरूप मुझको जो सर्वत्र भजता है ऐसा वह मेरा भक्त है। जो स्त्री, पुत्र, मित्र, आदि बन्धु–बान्धवों की संगति तथा प्रीती–स्नेह से रहित है तथा सभी प्राणियों में वैर–भाव से रहित है जो अनिष्टकारी वृत्ति वाले प्राणी हैं उनसे भी जो शत्रुभाव नहीं रखता। ऐसा जो पुरुष है, हे पाण्डव ! वह मेरा भक्त है मैं उसकी अंतिम परमगति हूँ उसकी अन्य कोई गति नहीं होती, वह मुझे ही प्राप्त करता है।

17.3 सारांश

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात हमें यह ज्ञात होता है कि हमें अपने जीवन में अहंकार का त्याग करना चाहिए। स्वयं भगवान कृष्ण अर्जुन को कहते हैं कि जो भी तू कर्म करता है उस कर्म को अहं भाव से अर्थात 'मैं कर रहा हूँ ' इस भाव से रहित होकर कर्म कर और उन सभी को मुझे अर्पित कर। क्योंकि जब किसी व्यक्ति को इस प्रकार अनुभव होता है कि वह जो भी कर रहा है वह कार्य उसी के द्वारा किया जा रहा है 'मैं करने वाला हूँ' 'मैं देने वाला हूँ' आदि के भाव आजाने से अचेतन बुद्धि में कहीं न कहीं वह अहं का भाव जाग्रत होता रहता है जो एक समय आते – आते प्रत्यक्ष होने लगता है। इसलिए व्यक्ति को चाहिए की वह जो भी यथा सामर्थ्य कर्म करें उस कर्म को यह सोचकर कि ये सब परमात्मा के द्वारा ही किया जा रहा है और परमात्मा को लक्ष्य करके ही उस कर्म का साधन करें। इस प्रकार कर्म करने से अहंकार भाव की समाप्ति हो जाएगी। इसलिए अर्जुन को कृष्ण द्वारा कहा जाता है कि जो मुझ परमेश्वर के लिए ही लौकिक और वैदिक कर्म को करता है, अपने स्वार्थ के लिए कुछ भी नहीं करता है जिस फल की इच्छा से मनुष्य कर्म करता है उसी फल

को वह प्राप्त करता है अन्य दूसरे फल को नहीं, वैसे ही यह मेरे लिए कर्म करता है अतः मुझको ही प्राप्त होता है। लोक में जो विहित है– जिन लौकिक कर्मों को तुम करते हो, जिस अनायास ही प्राप्त हुए अन्न को तुम खाते हो, जो चरु, पुरोडाश आदि होम योग्य वस्तुओं का श्रौत–स्मार्त विधियों से यज्ञ में अग्नि आदि देवताओं के लिए हवन करते हो, जो कुछ स्वर्ण, धन, धान्य, कन्या, गौ, घृत आदि उत्तमवस्तु ब्राह्मणआदि सत्पात्रों को देते हो और जो कुछ संध्या–वन्दन, वेदाध्ययन, व्रत–उपवास आदि तप करते हो – लौकिक और वैदिक जो भी कर्म करते हो उन सबको मेरे को अर्पित करो।

17.4 शब्दावली

- (२/७)– कार्पण्य – कायरता रूप
  धर्मसम्मूढचेताः – धर्म के विषय में मोहग्रसित हुआ
  श्रेयरू – कल्याण कारक
  शाधि – शिक्षा
  ब्रूहि – कहिये
- (२/४७)– अकर्मणि – कर्म न करने में
  सङ्ग – आसक्ति
  मा, भू – मत हो
- (९/२७)– अश्नासि – खाता है
  जुहोषि – हवन करता है
- (८/७)– अनुस्मर – स्मरण कर
  एष्यसि – प्राप्त होगा

17.5 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. अहंकार त्याग क्यों करना चाहिए? उसके क्या लाभ हैं।
2. अर्जुन द्वारा कृष्ण से पूछा गया श्रेय का साधन क्या है ?
3. निष्काम कर्म का निरूपण करें ?
4. सम्पूर्ण कर्मों का ईश्वर निमित्त त्याग से क्या लाभ है ?

17.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- श्रीमद्भगवद्गीता माहात्म्य – गीताप्रेस, गोरखपुर
- श्रीमद्भगवद्गीता साधारण भाषाटीकासहित – गीताप्रेस, गोरखपुर
- श्रीमद्भगवद्गीता यथारूप – भक्तिवेदान्तबुक ट्रस्ट
- श्रीमद्भगवद्गीता गीतातात्पर्यबोधिनी – श्रीशंकरानन्दसरस्वतीविरचित, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली
- श्रीमद्भगवद्गीता – साधकसंजीवनी हिन्दीटीका – गीताप्रेस, गोरखपुर
- पातञ्जलयोगदर्शनम् – व्यासभाष्यसहित 'योगदीपिका' – चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली।